भारत में उच्च शिक्षा का व्यापारीकरण
(Commercialization of Higher Education in India)

भारत में शिक्षा के व्यापारीकरण को ब्रिटिश काल के संदर्भ में समझा जा सकता है, जब लॉर्ड मैकाले—1835 ने अपने घोषणा-पत्र में कहा था कि भारत में हमें ऐसी शिक्षा-व्यवस्था चाहिये जो इस कथन के अनुरूप हो—*"Class of persons Indians in blood and colour, but English in taste, in opinions, words and intellect."* 1857 में स्थापित कलकत्ता, मद्रास एवं बम्बई विश्वविद्यालय इस आशय से खोले गए ताकि ब्रिटिश काल में लेबर मार्केट की आवश्यकताओं के अनुरूप मानव संसाधनों को प्रशिक्षित किया जा सके। आज भी ऐसा लगता है कि हम जैसे मैकाले की ही पुनरावृत्ति कर रहे हैं, क्योंकि बड़े उद्योगपति एवं योजना निर्माता बाजार की माँग के अनुरूप भारत में उच्च शिक्षा के व्यापारीकरण को गति प्रदान करने में लगे हुए हैं। ऐसा लगता है कि निजीकरण व्यापारीकरण का एक पर्याय बनकर रह गया है (Panikkar, 2011)।

उच्च शिक्षा का निजीकरण होने से शैक्षिक संस्थान व्यापारिक संस्थानों में बदल गये हैं (Tilak, 2004)। आर्थिक सुधारों के संदर्भ में सरकार ने जिस शिक्षा नीति की घोषणा की है, उसकी तीन प्रमुख विशेषताएँ हैं—केन्द्रीयकरण (Centralization), निजीकरण (Privatization), तथा बाहरी साधनों का प्रवेश (Entry of Foreign Education Providers)। वर्ल्ड बैंक तथा IMF के संकेत पर व्यापक निजीकरण, व्यापारीकरण एवं अनियमितीकरण के माध्यम से भारत सरकार ने शैक्षिक संस्थानों को आर्थिक सहायता प्रदान करनी बंद कर दी है। निजी विश्वविद्यालयों एवं डीम्ड विश्वविद्यालयों के द्वारा स्व-वित्त पोषित शिक्षा की व्यवस्था विभिन्न विधिक संशोधनों के तहत बड़े पैमाने पर की जा रही है। सर्वोच्च न्यायालय ने शिक्षा सम्बन्धी कई कड़े फैसले भी लिये हैं, लेकिन फिर भी राजनीतिज्ञों, उद्योगपतियों, शिक्षाविदों की साँठ-गाँठ के चलते अपने निजी स्वार्थ हेतु उच्च शिक्षा के व्यापारीकरण पर कोई प्रतिबन्ध लगाना सहज नहीं है (Gupta, 2004)।

व्यापारीकरण के कारण
(Causes of Commercialization)

भारत में उच्च शिक्षा के क्षेत्र में निर्बाध गति से व्यापारीकरण को गति प्रदान करने में निम्नलिखित कारक उत्तरदायी हैं—

(1) सरकार की 'सुधार' के स्थान पर 'विकार' की नीति (Govt. Policy to 'Deform' Rather than 'Reform')—कहा जाता है कि 2000 का दशक उच्च शिक्षा के क्षेत्र में विस्तार, निजीकरण, अंतर्राष्ट्रीयकरण से अधिक सम्बद्ध रहा है। भूषण (Bhushan, 2007) ने अपने शोध में स्पष्ट लिखा है कि यद्यपि "The official policy treats higher education as non-commercial social activity, yet the current trends defy it." इसी प्रकार शर्मा (Sharma, 2005) ने अपने शोध में लिखा है कि, "Higher education in India is being de-facto commercialized."

Scanned by TapScanner

इस संदर्भ में यह उल्लेखनीय है कि Ambani Birla Report (2000) जो NDA सरकार ने प्रस्तुत की, National Knowledge Commission Report (2006), Yashpal Committee Report (2009), जिन्हें UPA–I तथा UPA–II सरकार ने प्रस्तुत किया, उन सभी ने उच्च शिक्षा में नव्य-उदारवादी धारणा का अनुपालन किया है। बाद में अनेक बिलों के माध्यम से इस विषय पर गंभीर चर्चाएँ हुईं, लेकिन साफ तौर पर कुछ भी नहीं कहा जा सका। अभी हाल में, नारायण मूर्ति कमेटी (NMC, 2012) ने जिसे भारत सरकार के योजना आयोग ने नियुक्त किया था, उसने उच्च शिक्षा में कॉरपोरेट जगत की भागीदारी के सम्बन्ध में अपनी सिफारिशें प्रस्तुत की हैं। यह देखना होगा कि सरकार इस दिशा में किस प्रकार निर्णय ले पाती है।

(2) गुणवत्ता में गिरावट (Decline in Quality)—एक बड़े पैमाने पर निजी शिक्षा संस्थानों तथा विदेशी शिक्षा प्रदान करने वाली एजेन्सियों ने भारतीय उच्च शिक्षा की गुणवत्ता को लेकर गंभीर प्रश्न खड़े कर दिये हैं। विश्व की सर्वोच्च 100 विश्वविद्यालयों की सूची में कोई भी भारतीय विश्वविद्यालय अपनी जगह नहीं बना पाया है, यह अत्यन्त खेद का विषय है। केवल भारतीय विज्ञान संस्थान, बंगलौर तथा IIT, खड़गपुर विश्व की सर्वोच्च 500 विश्वविद्यालयों में अपना नाम सम्मिलित करा पाये और वो भी नीचे के पायदानों पर (Sharma, 2011)। आज सबसे योग्य व्यक्ति शिक्षण व्यवसाय के प्रति आकर्षित नहीं होते। भारतीय विश्वविद्यालयों में अध्यापकों की कमी एक सामान्य-सी बात है। छात्र सक्रिय रूप से अध्ययन में भाग नहीं लेते। साथ ही, आरक्षण व्यवस्था ने इसे और भी भयावह बना दिया है। *"Downgrading of quality and erosion of merit"*—(Deshpande, 2012)। केवल 31 प्रतिशत विश्वविद्यालय तथा 14.5 प्रतिशत कॉलिज NAAC करवा पाये है (MHRD, 2013 b)।

(3) उच्च शिक्षा में सरकारी खर्च में कमी (Decline in Public Expenditure on Higher Education)—गत वर्षों के आँकड़े इसके प्रमाण हैं कि शिक्षा के क्षेत्र में विशेषकर, उच्च शिक्षा के क्षेत्र में सरकारी खर्च में भारी कमी आई है। यहाँ तक कि कोठारी आयोग (1964-66) ने जो 6 प्रतिशत GDP के लक्ष्य की सिफारिश की थी, उसे भी आज तक प्राप्त नहीं किया जा सका है। स्थिति यह है कि 2011-12 में उच्च शिक्षा पर जो व्यय किया जा रहा है, वह मात्र 4.17 प्रतिशत है। शायद इस लक्ष्य तक पहुँच पाने में असफल रहने का कारण हमारी राजनीतिक सोच में कमी का ही परिणाम है (Tilak, 2006)।

(4) निजी संस्थानों में अनियमित वृद्धि (Unregulated Growth of Private Institutions)—निम्न तालिका से यह स्पष्ट हो जाएगा कि विभिन्न प्रकार के शैक्षिक संस्थानों का विस्तार किस गति से हो रहा है। ये आँकड़े सन् 2008 से 2012 तक के दिये गए हैं—

तालिका (Table)

Year	Central Universities	State Universities	Deemed Universities	State Private Universities	Colleges
2008	25	228	103	14	23,206
2009	40	231	128	21	25,951
2010	42	256	130	60	31,324
2011	43	297	129	10	33,023
2012	44	306	129	154	35,539

Source: UGC Annual Reports.

Scanned by TapScanner

(5) भारत में FEP's में वृद्धि (Increase in Foreign Education Providers in India)—भारत में विभिन्न स्रोतों के माध्यम से विदेशी शिक्षा दिलाने वाले स्रोतों का 2005 से 2010 तक का विवरण (प्रतिशत में) निम्न तालिका में दर्शाया गया है (Rahman, Mishra and Bajpai-2012)।

तालिका (Table)

Type of FEP	Total Number		
	2005	2006	2010
(A) Respective Home Campuses	237	504	440
(B) In India-Own Campuses	02	0	04
(C) Programmatic Collaboration	15	32	60
(D) Twinning Programme	20	27	54
(E) Other than Twinning	—	—	77
Total	**364**	**563**	**635**

Source : AIU Project Report, 2012.

(6) कमजोर एवं असक्षम नियामक ढाँचा (Work and Inefficient-Regulatory Framework)—भारत में उच्च शिक्षा से सम्बन्धित ढाँचा अत्यन्त कमजोर, असक्षम एवं संसाधनों के अभाव से प्रभावित है। अधिकाँश नियामक (कार्यकारी) निकायों को नौकरशाही, भाई-भतीजावाद व भ्रष्टाचार सम्बन्धी गंभीर चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। साथ ही, इन नियामक निकायों ने उच्च शिक्षा से सम्बन्धित निजी क्षेत्र में कार्य करने वाले लोगों के प्रति नकारात्मक धारणा बना रखी है तथा वे स्वयं को इसका नियंत्रक मान बैठे हैं। इस प्रकार के दृष्टिकोण से त्रस्त होकर निजी संस्थान गलत तरीके अपनाने के लिए बाध्य हुए हैं तथा अन्ततः वे एक लाभ कमाने वाली हस्ती (सत्ता) के रूप में देखी जाने लगी हैं। अतः ऐसी स्थितियों में यह आवश्यक है कि सरकार अपनी 'Hands-off Approach' का त्याग करें ताकि वह 'Fly-by Night Operators' पर अंकुश लगा सके, अन्यथा अन्त में शिक्षा जगत में प्रत्येक वस्तु बाजार में बेचने के लिए हमारी बाध्यता होगी तथा इस जाल से हम स्वयं को कभी नहीं निकाल पाएंगे।

शिक्षक की भूमिका (Role of the Teacher)

सबसे अहम् भूमिका शिक्षक की मानी जाती है। शिक्षकों के सामने सबसे बड़ी चुनौती अपने आपको उन पुराने आदर्शों के साथ बचाने की है। वैश्वीकरण की चपेट में सबसे ज्यादा शिक्षक व शिक्षा प्रणाली ही आए हैं।

पिछले अनेक वर्षों से विकास की इस अधूरी चाल से विश्व बैंक के कहने से ही हर क्षेत्र की नीतियों का निर्माण किया जा रहा है। इस जड़ में हमारे शैक्षिक संस्थान भी आ चुके हैं। स्कूलों और कॉलेजों में शिक्षक का कैडर विलुप्त प्रायः होता दिख रहा है। शिक्षकों की जगह ऐसे अप्रशिक्षित लोग ले रहे हैं जो न तो मानक योग्यता रखते हैं और न शिक्षण कार्य में उनकी रूचि या स्थायित्व। शिक्षक जिसे गुरु कहा जाता था, वह अब कहीं शिक्षा मित्र तो कहीं कॉन्ट्रेक्ट पर काम चलाऊ पद नामधारी है। शिक्षक संगठनों ने अपनी कमियों के चलते शुरुआत में किये गए विरोध को भी बन्द कर दिया है। जाहिर है कि वैश्वीकरण की इस आंधी में आज सबसे बड़ी जरूरत शिक्षक नाम के कैडर को बचाने की है। पर वैश्वीकरण के पुरोधाओं के उच्च पदों पर बैठे होने के चलते यह होता दिखाई दे, यह इतना आसान नहीं लगता है।

Scanned by TapScanner

दूसरी चुनौती, अपनी शिक्षा प्रणाली को बचाने की है। आर्थिक उदारवाद के इस दौर में आज बाजार में शिक्षा की दुकानें खुल गई हैं। केन्द्र और राज्य सरकारों की नीतियाँ सरकारी स्कूलों को तिरष्कृत कर निजी स्कूलों को बढ़ावा देने की है। निजी स्कूलों को दिये जा रहे बढ़ावों और महिमा मंडन से शिक्षा आम आदमी से दूर होती दिख रही है। सरकार निजी स्कूलों को बढ़ावा तो देती है, लेकिन सरकारी स्कूलों को सुधारने या निजी स्कूलों की तर्ज पर विकसित कर जनता को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा देने में असफल रही है। हमारी परम्परागत शैक्षिक प्रणाली ध्वस्त होती जा रही है। आगे की पीढ़ियाँ अच्छे कर्मी तो हो सकते हैं, लेकिन सुयोग्य नागरिक बन सकें इसमें संदेह है।

तीसरी प्रमुख चुनौती है कि शिक्षा कैसी हो। यह तय करने वाले शिक्षाविद् नहीं बल्कि ब्यूरोक्रेट्स और कारपोरेट घराने के मुखिया हैं। सरकार इनकी गोद में बैठकर शिक्षा के क्षेत्र में बाजारीकरण को बढ़ावा देने के लिए पब्लिक-प्राइवेट पार्टनरशिप का राग अलाप रही है जबकि असल निशाना उन कॉरपोरेट घरानों को लाभ पहुँचाने व शिक्षा के क्षेत्र से अपना पीछा छुड़ाने का ही है। दरअसल इसके जरिये शिक्षा के सरकारी संसाधनों को पब्लिक-प्राइवेट लूट को ही आधिकारिक स्वरूप प्रदान करने की कोशिश की जा रही है। जाहिर है कि इस मुहिम में सभी को जागरुक करना होगा, ताकि कहीं देर न हो जाए और हम बाद में पछताते रहें।

●●●

Scanned by TapScanner